आलो आंधारि (हिन्दी)

अ लाईफ़ लेस ऑर्डनरी (अंग्रेज़ी)

प्रकाशकः रोशनाई प्रकाशन 2002 (हिन्दी)

पेनगुइन व जुबान बुक्स 2006 (अंग्रेज़ी)

आलो आंधारि (अंधेरे से उजाले की ओर) नाम से रोशनाई प्रकाशन द्वारा प्रकाशित तथा उर्वशी बुटालिया द्वारा अनूदित पुस्तक *अ लाईफ़ लेस ऑर्डनरी* बेबी हालदार की बतौर लेखिका पहली कृति है।

बेबी की यह किताब सीधे ज़िंदगी से आती है। एक सेवादारिन के रोज़मर्रा के जीवन का प्रतिबिम्ब। पुस्तक की शुरूआत होती है एक खुशहाल परिवार में जहां माता-पिता, भाई व बहन जम्मू-कश्मीर और फिर मुर्शीदाबाद व डलहाऊज़ी में बसते हैं। पर कुछ ही पन्ने पलटने के बाद पाठक का परिचय एक मजबूर, पीड़ादायक और संघर्षमय दुनिया से होता है।

पुस्तक का मुख्य चरित्र बेबी हालदार है जो एक साधारण बच्ची है जिसे स्कूल जाना पसंद है। लड़की के बचपन की थोड़ी बहुत मनोरम झलकियां यहीं दिखाई देती हैं। वह पढ़ना चाहती है। उसके पिता फौज में नौकरी करते हैं। कभी घर पर नहीं रहे पर उनकी एक बात बेबी ने गांठ बांध ली थी। वे कहते थे, 'कुछ भी करो पर तुम कभी पढ़ना नहीं भूलना।'

घर के नाज़ुक हालातों से जूझती बेबी की मां का छोटे भाई के साथ घर छोड़ जाना बेबी और उसकी बहन के जीवन में बदलाव लाता है। दोनों बहनें गुज़ारे के लिए कोठियों में काम करने लगीं। पिता दूसरी शादी कर लेता है पर सौतेली मां के साथ गुज़ारा मुश्किल हो जाता है। तकलीफ़ों और अभावों में जीने की मजबूरी के बीच बेबी की बहन की शादी पंद्रह साल की उम्र में हो जाती है।

बारह वर्ष की कमसिन उम्र में बेबी का विवाह उसे कठोर सच्चाई के एक दूसरे चक्रव्यूह में झोंक देता है। अपने से चौदह साल बड़े पति के हाथों हिंसा झेलती बेबी किताब के पन्नों में अपने तीन बच्चों के साथ इस शादी को तोड़कर भागने का मार्मिक वर्णन करती है।

किताब के अधिकांश हिस्से मे बेबी का अपने जीवन के अच्छे, बुरे व बदसूरत हालातों में संघर्ष करके जीने के प्रयास का विवरण है। अपनी ज़िंदगी को हर मुमकिन कोशिश कर हिम्मत से बसर करने का उसका प्रयास काबिले-तारीफ़ है। उस नारकीय जीवन से आज़ाद होकर प्रोफ़ेसर प्रबोध कुमार, जो नामचीन हिंदी साहित्यकार प्रेमचंद के पोते हैं से उसकी मुलाकात, दिल्ली तक पहुंचने का सफ़र और अपने भीतर के तनाव से मुक्ति का वर्णन इस पुस्तक का मुख्य हिस्सा है।

पुस्तक में उभरने वाली एक अनोखी बात यह है कि अपने जीवन की मुश्किलों बयान करते हुए बेबी खुद को एक दर्शक के रूप में देखती है जिससे उसके लेखन का स्वभाव बदल जाता है। वह अपने ऊपर हो रहे अत्याचारों की शिकायत नहीं करती बल्कि हौसले व निडरता से उनका सामना करती है।

पुस्तक का वृतान्त सहजता के साथ एक घटना से दूसरी घटना की ओर सरकता चला जाता है। पाठक के लिए यह पुस्तक एक साहित्यक रचना बेशक न हो परन्तु बेबी की लेखनी की गहराई उसकी दिलचस्पी कायम रखने में कामयाब रहती है।

पुस्तक के पिछले हिस्से में बेबी का अपने तीन बच्चों के साथ दिल्ली आगमन का विवरण है। यहां पर वह घरों में काम करती है जहां उसकी तनख्वाह काफी कम है और उसे रात को फुटपाथ पर सोना पड़ता है। कई दिनों की कमरतोड़ मेहनत के बाद बेबी प्रोफेसर प्रबोध के घर पहुंचती है।

शायद नये अनुभव और नई अंतर्दृष्टि को अब उसके जीवन में पहुंचने का मौका मिलने वाला था। किसी भी घरेलू कामगार की तरह बेबी घर के काम करती रहती है। एक दिन किताबों की साफ-सफाई करते समय उसे तसलीमा नसरीन का बांग्ला ग्रंथ, *आमार मेयबेला (मेरा बचपन)* मिलता है जिसे वह तल्लीनता से पढ़ने लगती है। प्रोफ़ेसर साहब उसे पढ़ते हुए देखते हैं। किताबों और पढ़ने में उसकी लगन को देखकर वे उसे लिखने के लिए प्रेरित करते हैं। यही लेखन अंत में उसकी उम्मीद और खुशी का मूल-मंत्र बन जाता है।

हालातों से उबरने वाली औरत के तौर पर बेबी के अनुभव उसकी लेखन शैली पर अपनी छाप छोड़ते हैं। बेबी की कलम की वेदना पाठक के दिलों को इस कदर छूती है कि पीड़ा से मन ऐंठ जाता है। पुस्तक का अंत वह एक गहन विचार से करती है "इंसान घर का काम करते हुए भी लिख सकता है।"

सभी महिलाओं के लिए इस पुस्तक का एक सशक्त संदेश है- कभी भी अपने सपनों को मरने नहीं देना चाहिए।

इस किताब का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है इसके पन्नों में दर्ज बेबी के साहस, दृढ़ता और जीवन की कठिनाइयों से जूझने का जुनून। यह रचना उन सभी पाठकों के लिए प्रेरणादायक है जो जीवन के आम-खास अनुभवों का अर्थ समझने में विशेष रूचि रखते हैं।

इस पुस्तक का मलयालम तथा अन्य भारतीय भाषाओं में भी अनुवाद किया गया है। जापानी व फ्रेंच अनुवाद भी जल्दी ही किया जाएगा। बेबी हालदार आज भी प्रोफ़ेसर प्रबोध कुमार के घर काम करती है। उसे गर्व है अपने आप पर। वह अपनी दूसरी किताब पर भी काम कर रही है।

—माधवी मेनन